SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

U;kf;d lfØ;rk dk ykdrkf=d eY; ij çHkko

'ork ik.M;] शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
नीलाम्बर–पीताम्बर विश्वविद्यालय, पलामू, झारखण्ड, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
'ork ik.M;] शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
नीलाम्बर–पीताम्बर विश्वविद्यालय,
पलामू, झारखण्ड, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 21/01/2023
Revised on : -----
Accepted on : 28/01/2023
Plagiarism : 00% on 23/01/2023

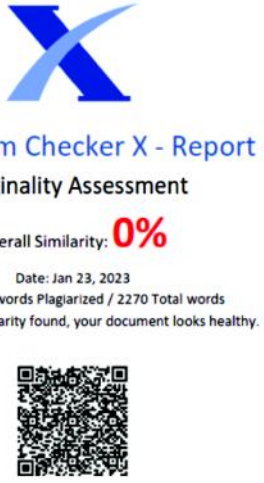

'kks/k lkj

न्यायिक सक्रियता वास्तव में एक ऐसी अवधारणा है जिसका उल्लेख भारतीय संविधान में नहीं है लेकिन व्यवहार में आज न्यायिक सक्रियता न्यायपालिका के लिए एक ऐसे यंत्र के रूप में कार्य कर रहा है जिसके द्वारा न्यायपालिका न केवल जनसामान्य के अधिकारों की रक्षा कर रही है बल्कि शासन के अन्य अंगों कार्यपालिका व विधायिका को भी अपने कर्तव्य के प्रति सजग किया है। न्यायिक सक्रियता न्यायपालिका की सकारात्मक दृष्टिकोण है जिसमें यह न केवल उनलोगों को न्याय दिलाता है, जो इनके समक्ष न्याय की मांग लेकर आते हैं, बल्कि स्वयं एक कदम आगे बढ़कर उनलोगों को भी न्याय सुलभ कराती है जो न्याय की मांग तक नहीं कर पाते। न्यायपालिका जनहित याचिका के माध्यम से या स्वतः संज्ञान के माध्यम से अपनी सक्रियता दिखाते हुए लोगों की स्वतंत्रता, समानता व न्याय की सुरक्षा सुनिश्चित करती है, क्योंकि भारतीय संविधान के प्रस्तावनों में वर्णित सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय की परिकल्पना को साकार करना ही शासनसत्ता के प्रत्येक अंगों का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। लेकिन जहाँ कहीं कार्यपालिका व विधायिका अपने कर्तव्यों से विमुख होते हैं वहाँ न्यायपालिका सक्रिय हो जाती है और उनके द्वारा उत्पन्न रिक्तता को भरने तथा जनसामान्य के हितों की रक्षा करने के कारण ही न्यायिक सक्रियता की अवधारणा प्रफुल्लित हुई।

e[; 'kCn

U;kf;d lfØ;rk] ykdrkf=d eY;] lekurk] lokPp U;k;ky;] Lor% lKku] tufgr ;kfpdk-

çLrkouk

इंगलैण्ड के मुख्य न्यायाधीश रह चुके लार्ड हेवर्ट

ने अभिकथन किया किः

"यह मौलिक रूप से महत्वपूर्ण है कि न्याय न केवल किया जाना चाहिए बल्कि स्पष्ट रूप से और निर्विवाद रूप से देखा जाना चाहिए।"

इस अवधारणा को न्यायिक सक्रियता सत्य सिद्ध करता है क्योंकि आज न्यायपालिका की कार्यवाहियॉ जनसामान्य के मध्य चर्चा का विषय बना हुआ है तथा न्यायालय कानूनी न्याय के अपने पारंपरिक दायरे से बाहर निकालकर कुछ रचनात्मक कार्य करते हुए सामाजिक व आर्थिक न्याय स्थापित करने का प्रयास कर रहा है। भारतीय संविधान के प्रस्तावना में वर्णित सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय ने वास्तव में एक व्यापक अर्थ को स्वयं में समाहित किया हुआ है। सामाजिक न्याय के द्वारा परस्पर बंधुत्व की भावना, आर्थिक न्याय के द्वारा स्वतंत्रता तथा राजनीतिक न्याय में समानता समाहित है। यही कारण है कि जब भी न्यायपालिका सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय की स्थापना का प्रयास करती है तो वह स्वतः ही हमारे लोकतांत्रिक मूल्यों की प्रहरी बन जाती है।

आज भारतीय समाज में जाति व धर्म के आधार पर राजनीति करना आम बात है जिससे संपूर्ण समाज छोटे–छोटे समुहों में बंटता जा रहा है और इस कारण भारत की अखण्डता व एकता को अक्षुण बनाये रखना एक चुनौती है ऐसी स्थिति में सामाजिक न्याय स्थापित करके बंधुत्व को बढ़ावा देने की जिम्मेंदारी न्यायपालिका पर है क्योंकि सभी राजनीतिक पार्टियॉ केवल लाभ के सिद्धांत पर काम कर रही हैं। आज की न्यायपालिका इतनी सक्रिय हो गई है कि आज यह न केवल न्याय की स्थापना करती है बल्कि यह एक प्रशासक, सुधारक अनुसंधानकर्त्ता व नीति निर्धारक की भी भूमिका निभा रही है। न्यायिक सक्रियता में न्यायालय अपने परंपरागत 'सुने जाने को विश्वास दिलाता है कि आपको न्याय दिलाना तथा आप तक न्याय की पहुँच को सुनिश्चित कराना हमारी जिम्मेंदारी है इसलिए यदि कोई व्यक्ति गरीब, असहाय, लाचार, अशिक्षित या दिव्यांग हो तथा वह न्यायालय तक स्वयं नहीं पहुँच पाता तो न्यायालय उस व्यक्ति तक पहुँच जायेगा अर्थात् उस व्यक्ति के पक्ष को यदि किसी अन्य व्यक्ति या संस्था द्वारा भी न्यायालय तक लाया जाता है तो न्यायालय उसे याचिका मानकर स्वीकार करती है तथा इसे ही जनहित याचिका कहा जाता है। कभी–कभी न्यायालय द्वारा स्वयं ही समाचार पत्रों या न्यूज चैनलों में इस प्रकार की सुर्खियों पर संज्ञान लिया जाता है जिसे स्वतः संज्ञान कहा जाता है। यही वे माध्यम हैं जिसमें न्यायालय की सक्रियता दिखाई देती है। न्यायालय हरहाल में हरेक व्यक्ति के अधिकारों एवं संविधान में वर्णित लोकतांत्रिक मूल्यों की सुरक्षा की गारण्टी देता है।

vè;;u dk mís';

1. न्यायालय अपने सक्रिय स्वरूप में किन–किन विधियों का प्रयोग करता है इसका अध्ययन करना।
2. न्यायालय की सक्रियता ने लोकतांत्रिक मूल्यों पर क्या प्रभाव डाला है इसका विश्लेषण करना।
3. न्यायपालिका की सक्रियता ने लोगों के मध्य न्याय की प्रति विश्वास को स्थापित करने में कितनी भूमिका अदा की है, इसका परीक्षण करना।
4. न्यायिक सक्रियता ने शक्ति पृथकरण को चुनौती दिया है, इसका मूल्यांकन करना।
5. न्यायिक समीक्षा की विवेचना करना।

lkfgR;koyksdu

न्यायिक सक्रियता का उल्लेख भारतीय संविधान में कही नहीं किया गया लेकिन न्यायालय ने कई मामलों में संविधान की व्याख्या करते समय संविधान में लिखे शब्दों के बजाए संविधन निर्माताओं की भावनाओं को प्राथमिकता दिया है और इसी आधार पर प्रस्तावना में उल्लेखित सामाजिक व आर्थिक न्याय की स्थापना का कार्य करने के लिए न्यायालय ने सक्रिय स्वरूप अख्तियार किया। यह अवधारणा नवीन है लेकिन इसके प्रभाव सकारात्मक दिख रहे हैं। आज जनसामान्य न्यायालय में विश्वास दिखाता है कि तथा शक्ति सम्पन्न लोग न्यायालय से खौफ

खाते हैं इसका एकमात्र कारण यही है कि न्यायालय ने अपनी भूमिका में काफी परिवर्तन किया है तथा अपने नकारात्मक स्वरूप को सकारात्मक बनाने तथा समाज के हितों की रक्षा के लिए स्वयं तत्पर रहा है। न्यायालय ने किस प्रकार लोकतांत्रिक मूल्यों को प्रभावित किया है इसकी समीक्षा हेतु शोध की नितांत आवश्यकता हैं। इस विषय से मिलता–जुलता लेख अक्सर प्रकाशित हेते रहे है तथा कई पुस्तकों की भी रचना की गई है जिनमें से कुछ प्रमुख निम्न हैः

डॉ. डेका स्वप्ना मनिन्द्रनाथ ने अपनी पुस्तक 'Judicial Activism In post-Emergency Era' (2015) में भारत में आपातकाल के बाद न्यायिक सक्रियता के स्वरूप का वर्णन किया है क्योंकि यह एक ऐसी सम्यावधि थी जिसमें लोगों के अधिकार छिने जा रहे थे तथा लोकतांत्रिक मूल्यों को ताक पर रख दिया गया था।

डॉ. ना. वि. परांजपे की पुस्तक 'लोकहितवाद, विधिक सहायता एवं सेवाएँ, लोक अदालतें तथा पैरालिगल सेवाएँ' (2021) में उन सभी जनहित याचिकाओं की व्याख्या की गई है जिसमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से लोकतांत्रिक मूल्यों को सुरक्षित किया गया है।

डॉ. वन्दना की पुस्तक 'Dimension fo Judicial Activism in India (2019)' में भारत में न्यायिक सक्रियता के विभिन्न आयामों की चर्चा की गई है।

डॉ. पंकज कुमार व श्रीमती श्रुति बिटोलिया के द्वारा लिखी गई पुस्तक 'Facets fo Judicial Activism in India' में न्यायिक सक्रियता से जुड़ी विभिन्न संवैधानिक व अनिवार्य पहलुओं की व्याख्या की गई है।

प्रोफेसर सुबिर के. भटनागर की पुस्तक 'SUO Moto Petitions by India Court's (2021) में न्यायालय के द्वारा स्वतः संज्ञान लेकर दिये गये निर्णयों की विस्तृत चर्चा की गई है।

उपर्युक्त पुस्तकों के अतिरिक्त दैनिक समाचार पत्रों एवं न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों का गहन अध्ययन के पश्चात् इनका विश्लेषण किया।

'kksèk i)fr o vè;;u {ks=

सर्वोच्च न्यायालय वास्तव में अपने दोहरी भूमिका को अदा करता है, एक मौलिक अधिकारों के रक्षक के रूप में तथा दूसरा संविधान के व्याख्याकार के रूप में। इन दोनों के ही रूपों में न्यायपालिका लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा का कार्य ही करता है। न्यायपालिका न्यायिक समीक्षा के द्वारा विधायिका के उपर तथा न्यायिक सक्रियता के द्वारा कार्यपालिका के उपर नियंत्रण स्थापित करती है तथा दोनों अंगों के कारण उत्पन्न 'निर्वात' को भरकर संविधान के महत्वपूर्ण लोकतांत्रिक मूल्यों को सुरक्षा प्रदान करती है।

न्यायपालिका किस प्रकार से लोकतांत्रिक मूल्यों को सुरक्षित करती है इसका विश्लेषण किया जाना अनिवार्य है साथ ही न्यायिक सक्रियता की प्रासंगिकता सुनिश्चित किया जाना चाहिए। इसके लिए सभी पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर निष्पक्ष विश्लेषण की आवश्कता है।

अध्ययन में विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण के साथ–साथ आलोचनात्मक दृष्टिकोण को भी अपनाया गया है। संपूर्ण अध्ययन पूर्वाग्रह मूक्त एवं वस्तुनिष्ठ है तथा इसके निष्कर्षों को प्राप्त करने हेतु निम्नलिखित चरणों को अपनाया गया हैः

çkFkfed vkadMk dk ladyu

विभिन्न न्यायाधीशों एवं कानूनी ज्ञाताओ द्वारा समय–समय पर अलग–अलग पत्र–पत्रिकाओं में दिये गये साक्षात्कारों में वैसे कथनों का चयन जो न्याय व्यवस्था से जुड़ा हो।

f}rh; vkadMk dk ladyu

विभिन्न विद्धानों या विदुषियों द्वारा लिखी गई पुस्तकों, शोध–प्रपत्रों समाचार पत्रों व प्रतिवेदनों आदि को संग्रहित करके उनका प्रयोग करना जिससे शोध के लिए पर्याप्त आगत प्राप्त हो सके।

d:l vè;;u

सर्वोच्च न्यायालय एवं विभिन्न उच्च न्यायालयों के द्वारा जनहित याचिका पर दिये गये महत्वपूर्ण निर्णयों का अध्ययन किया गया।

fo'y"k.k ,o l puk fuek.k

उपरोक्त विधियों द्वारा मात्र आँकड़ों का संकलन करना ही पर्याप्त नहीं बल्कि इन आँकड़ों का विश्लेषण करके एक गुणात्मक शोध कार्य किया गया जिसमें अनावश्यक आँकड़ों को पृथक कर दिया गया।

fu"d"k ,o l>ko

प्रत्येक शोध में आँकड़ों का संकलन एक महत्वपूर्ण चरण होता है लेकिन केवल आँकड़े का संकलन करना शोध के उद्देश्य को पूर्ण नहीं करता वरन् इसके लिए इन आँकड़ों का विश्लेषण करके इससे एक सार्थक निष्कर्ष निकाले गए तथा इसमें सुधार हेतु कुछ सुझाव भी दिये गए।

'kk/k l çkl r ifj.kke

भारत के एकीकृत न्याय प्रणाली में सर्वाधिक चर्चित मुद्दा न्यायिक सक्रियता का ही है। न्यायपालिका अक्सर इस बात को स्पष्ट करती है कि न्याय के पक्ष में निर्णय देने का उसके पास साधरण संवैधानिक शक्तियाँ हैं तथा इन शक्तियों का इस्तेमाल यह किसी भी वैधानिक दायरे से बाहर जाकर भी करेगी।

हमारे संविधान में जिन मूल्यों की चर्चा की गई है, उनकी स्थापना सरकार का कार्य है, लेकिन वर्तमान में राजनीतिक गलियारे में वोट बैंक के राजनीति ने घर कर लिया है, जहाँ जाति के आधार पर, धर्म के आधार पर या क्षेत्र के आधार पर लोगों को बाँटा जा रहा है तथा गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा को पार्टी का मुख्य एजेंडा बनाकर लोगों द्वारा सद्भावना वाला वोट बटोरा जा रहा है। लेकिन जब यही पार्टियाँ सत्ता में आती हैं तो जनहित कार्यो को करने से बचती है, जिसका परिणाम, आक्रोश हड़ताल, दंगा, बंद आदि के रूप में सामने आता है। इन्हीं परिस्थितियों को झेलने के पश्चात् न्यायपालिका में बैठे कुछ बुद्धिजीवी न्यायाधीशों ने अपनी शक्ति में विस्तार करके इन समस्याओं को हल करने का प्रयास किया। वे 'Justice for all' के सिद्धांत पर कार्य करते हुए न्याय तक सर्वसाधारण की पहुँच को सुनिश्चित कराने का काम किया है। हमारी न्याय व्यवस्था आज अपने पुराने पारंपरिक छवि से बाहर आकर उम्मीद की अंतिम किरण के तौर पर लोगों के बीच स्थापित हो चुके है।

इसी काम को वह विभिन्न प्रकारों से सम्पन्न करती है जैसे–जनहित याचिका के रूप में तो कभी स्वतः संज्ञान के रूप में या कभी अनुच्छेद 32 तथा 226 के तहत मौलिक अधिकार के रक्षक के रूप में।

न्यायालयों के समक्ष कई ऐसे मामले आये जहाँ न्यायपालिका ने अपने निर्णय से लोकतांत्रिक मूल्यों को और अधिक सुदृढ़ किया है। जैसे–मानसिक रूप से विक्षिप्त कैदियों का अवैध निरोध को रोकने का मामला हो या शोभरानी बनाम मधुकर रेड्डी का मामला जहाँ दहेज प्रताड़ना से सुरक्षा दिलाया गया हो। इसी प्रकार विशाखा बनाम राजस्थान राज्य का मामला जहाँ कार्यस्थल पर पुरूष सहकर्मी द्वारा महिला सहकर्मी के साथ अश्लील व्यवहार का मामला सामने आते ही न्यायालय ने सरकार को फटकराते हुए इससे संबंधी कानून बनाने का निर्देश दिया तथा तब तक के लिए स्वयं दिशा–निर्देश जारी किया। न्यायपालिका का यह काफी सकारात्मक कदम माना जा सकता है जहाँ वह न सिर्फ न्याय दिलाती है बल्कि विधि निर्माण में भी महत्वपूर्ण योगदान निभाती है। कई ऐसे मामलों भी प्रकाश में आये जहाँ न्यायालय ने पर्यावरण संरक्षण से संबंधित निर्णय भी दिये जैसे–श्रीरामफूड एण्ड फर्टीलाइजर का मामला हो या सच्चिदानंद पाण्डेय बनाम पश्चिम बंगाल राज्य का बेगम–बारी का मामला, सभी में न्यायालय ने व्यक्ति के जीवन जीने के अधिकार के साथ पर्यावरण को जोड़कर निर्णय दिया। इस प्रकार आज ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है जो न्यायपालिका के क्षेत्राधिकार व न्यायिक दायरे से बाहर है। इसलिए यह स्पष्ट रूप से कहा जाना चाहिए कि न्यायपालिका ने लोकतांत्रिक मूल्यों की सुरक्षा प्रदान किया है तथा सही मायने में यह संविधान का प्रहरी एवं एकमात्र व्याख्याकार है। न्यायपालिका संविधान के शब्दों से अधिक इसकी भावनाओं की व्याख्या करता है तथा

यही इसे इतना सक्रिय होने का साहस देता है।

l>ko

न्यायपालिका ने वास्तव में अपने स्वरूप में रचनात्मकता का भाव भरा है तथा इससे हमारे देश व समाज में न्याय व्यवस्था के प्रति सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रकार के दृष्टिकोण का आर्विभाव हुआ है। न्यायपालिका के द्वारा लोकतंत्र की सुरक्षा हेतु समय–समय पर कार्यपालिका व विधायिका की निष्क्रिय व्यवहारों पर आघात करने के कारण वास्तव में समाज दो गुटों में बँट गया है। इनमें से एक सकारात्मक दृष्टिकोण वाले लोगों के लिए न्यायिक सक्रियता वरदान की भांति है, जबकि नकारात्मक दृष्टिकोण अपने वाले लोग इसे न्यायपालिका की तानाशाही भी कहते है।

वास्तव में न्यायपालिका समय के साथ–साथ अपने शक्ति का विस्तार करता जा रहा है तथा इससे जनता द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों व सरकार के बजाए न्यायपालिका विधि बनाने व उनका कार्यन्वयन का काम करने लगेगी तो यह लोकतंत्र के लिए खतरा है। अतः शासन के दोनों अंगों को अपने कर्तव्यों के प्रति सजग होना चाहिए तथा ऐसी रिक्तता उत्पन्न ही नहीं होने देना चाहिए जहाँ न्यायपालिका सेंध मार सके।

कार्यपालिका व विधायिका की लापरवाही तथा लाभ की प्रवृति जनता को न्यायपालिका के और समीप ले जा रही है तथा उनका न्यायपालिका पर विश्वास और अधिक बढ़ रहा है। न्यायपालिका पद जनता का विश्वास बढ़े लेकिन विधायिका व कार्यपालिका पर विश्वास कम न हो, इस दिशा में कार्य करने की आवश्यकता है। इससे ही हमारे लोकतंत्र की खूबसूरती बनी रहेगी।

lanHk lph

1. पांडे जे. एन., *'कॉस्टीटूयूशनल लॉ ऑफ इण्डिया,"* 1988
2. कश्यप सुभाष, *"हमारा संविधान"* 4जी संस्करण 2015
3. बासु डी.डी., *"कमेंट्री ऑन द कॉस्टीटूयूशन ऑफ इण्डिया एन. सी. सरकार",* 10 भागों में प्रकाशित महत्वपूर्ण ग्रंथ, कलकत्ता 1965
4. शर्मा एस. एन., *"पर्सनल लिबर्टी अंडर इंडियन कॉस्टीटूयूशन"* दीप एण्ड दीप, नई दिल्ली, 1991
5. बक्शी उपेन्द्र, *"इण्डियन सुप्रीम कोर्ट एण्ड पॉलिटिक्स,"* लखनऊ ईस्टर्न बुक कम्पनी, 1980
6. कुमार विजय, *"भारत में सर्वोच्च न्यायालय,"* 2020
7. व्हीयर के. सी., *मॉडर्न कॉन्स्टचूशन,* 1966
8. वन्दना, "Dimension fo Judicial Activism in India"1st ed 2019.

****